जैन
पथप्रदर्शक
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

समताभाव की प्राप्ति का एकमात्र उपाय वृत्ति का स्वभाव सन्मुख होना ही है।

द्ध बारह भावना अनुशीलन, पृष्ठ :27

वर्ष : 29, अंक : 8 | सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** | आजीवन शुल्क : 251 रुपये
जुलाई (द्वितीय), 2006 | प्रबन्ध सम्पादक : **पं. संजीवकुमार गोधा व पं. जितेन्द्र वि. राठी** | वार्षिक शुल्क : 25 रु., एक प्रति : 2/-

अष्टाह्निका महापर्व धूम धाम से मनाया

जयपुर (राज.) : यहाँ श्री टोडरमल स्मारक भवन में अष्टान्हिका महापर्व के अवसर पर दिनांक 4जुलाई से 11 जुलाई, 06 तक श्री सुरेशकुमारजी अजितकुमारजी तोतूका परिवार द्वारा सिद्धचक्र महा मण्डल विधान का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर प्रात: पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, ब्र. यशपालजी जैन एवं पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील के मार्मिक प्रवचन हुये। रात्रि में पण्डित पीयूषकुमारजी शास्त्री के विधान की जयमाला पर सारगर्भित प्रवचनों का लाभ मिला।

दैनिक कार्यक्रमों में प्रात: गुरुदेवश्री के सी.डी प्रवचनों के अतिरिक्त ब्र. यशपालजी द्वारा गुणस्थान विवेचन, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील द्वारा समयसार, पण्डित संजीवकुमारजी गोधा द्वारा परमभाव प्रकाशक नयचक्र एवं तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग-2, पण्डित पीयूषकुमारजी शास्त्री द्वारा मोक्षमार्ग प्रकाशक, पण्डित धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री द्वारा मोक्षमार्गप्रकाशक, तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग-1 एवं छहढाला, पण्डित श्रुतेशजी सातपुते द्वारा वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग-1एवं पण्डित जितेन्द्रकुमारजी राठी द्वारा रत्नकरण्ड श्रावकाचार की कक्षायें ली गई।

विधि विधान के समस्त कार्य पण्डित धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री के निर्देशन में महाविद्यालय के विद्यार्थियों के सहयोग से पण्डित चिन्मयजी शास्त्री पिड़ावा ने सम्पन्न कराये। प्रतिदिन सायंकाल जिनेन्द्र भक्ति होती थी।

साथ ही **घी वालों का रास्ता स्थित श्री दि. जैन तेरापंथी बड़ा मंदिर** में प्रतिदिन पण्डित संजीवकुमारजी गोधा के दोनों समय मोक्षमार्ग प्रकाशक एवं सर्वार्थसिद्धि पर प्रवचनों के अतिरिक्त प्रात: श्री विजयकुमारजी सौगाणी के निर्देशन में पंचमेरु-नन्दीश्वर विधान का आयोजन किया गया।

सामूहिक बाल संस्कार शिविर

भिण्ड (म.प्र.) : अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन शाखा-देवनगर, भिण्ड एवं श्री कुन्दकुन्द प्रवचन प्रसारण संस्थान उज्जैन के संयुक्त तत्त्वावधान में भिण्ड, ग्वालियर, इटावा एवं शिवपुरी के निकटवर्ती 29 स्थानों पर दिनांक 13 से 22 जून, 2006 तक 29 वाँ सामूहिक बाल संस्कार शिविर अनेक उपलब्धियों के साथ सम्पन्न हुआ।

शिविर में ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, पण्डित बाबूभाई मेहता फतेपुर, पण्डित नागेशजी पिड़ावा, ब्र. सुकुमालजी झांझरी उज्जैन, पण्डित महेन्द्रजी शास्त्री खनियांधाना के अतिरिक्त श्री टोडरमल दि.जैन सिद्धान्त महाविद्यालय जयपुर, श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन मंगलायतन, आचार्य अकलंक शिक्षण संस्थान ध्रुवधाम बांसवाड़ा एवं श्री नन्दीश्वर महाविद्यालय खनियांधाना से पधारे विद्वानों के माध्यम से प्रतिदिन प्रात: पूजन-प्रक्षाल, शिक्षण कक्षायें, प्रवचन, दोपहर में प्रौढ कक्षायें, सायंकाल बाल कक्षा व जिनेन्द्र भक्ति तथा रात्रि में प्रवचन व सांस्कृतिक कार्यक्रमों द्वारा धर्मप्रभावना हुई।

शिविर में छहढाला, तत्त्वार्थसूत्र, लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका, भक्तामर स्तोत्र तथा बालबोध पाठमाला व वीतराग-विज्ञान पाठमाला की कक्षाओं में लगभग 6300 साधर्मियों ने धर्म लाभ लिया।

शिविर का कुशल संयोजन पण्डित शुद्धात्मप्रकाशजी शास्त्री मौ एवं पण्डित विकासजी शास्त्री मौ ने किया।

कल्पद्रुम मण्डल विधान सम्पन्न

बड़नगर-उज्जैन (म.प्र.) : यहाँ श्री दिगम्बर जैन महिला मण्डल तेरापंथी गोठ के तत्त्वावधान में श्री दिगम्बर जैन चन्द्रप्रभ बड़ा मंदिर में दिनांक 25 जून से 1 जुलाई 2006 तक श्री कल्पद्रुम महामण्डल विधान उत्साहपूर्वक सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी उज्जैन, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाडा, पण्डित अनिलकुमारजी पाटोदी बडनगर, पण्डित अनिलकुमारजी शास्त्री भिण्ड के प्रवचनों का लाभ मिला।

विधान के सम्पूर्ण कार्य ब्र. पण्डित जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद के निर्देशन में पण्डित धनसिंहजी ज्ञायक पिड़ावा, पण्डित क्रान्तिकुमारजी पाटनी इन्दौर एवं विदुषी ज्ञानधाराजी झांझरी उज्जैन ने कराये।

दिनांक 25 जून को शांतिजाप, मंगलकलश स्थापना, झण्डारोहण पूर्वक विधान का उद्घाटन किया गया तथा 1 जुलाई को शांतियज्ञ पूर्वक समापन के पश्चात् जिनेन्द्र रथयात्रा निकाली गई।

कार्यक्रम में टोडरमल संगीत सरिता जयपुर एवं तरंग महिला मण्डल उज्जैन द्वारा आध्यात्मिक भक्ति गीतों का रसास्वादन कराया गया।

सांस्कृतिक कार्यक्रमों में पिडावा पार्टी द्वारा कवि सम्मेलन विशेष रहा। इस अवसर पर पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट जयपुर को साहित्य की कीमत कम करने हेतु 50,000/- रुपये प्राप्त हुये। **- अशोक शाह**

सम्पादकीय –

ये तो सोचा ही नहीं

ह्न रतनचन्द भारिल्ल

८. पैसा बहुत कुछ है, पर सब कुछ नहीं

एक दिन धनेश को सुध-बुध खोये बेडरूम के बाहर बरामदे में जमीन पर अर्द्धमूर्च्छित हालत में पड़े-पड़े बड़बड़ाता देख उसकी पत्नी धनश्री ने अपना माथा ठोक लिया और उलाहने के स्वर में भगवान को सम्बोधित करते हुए कहने लगी ह्न

''हे विधाता ! यह क्या हो रहा है ? क्या मेरे भाग्य में भी वही सब है, जो मेरी माँ भोग रही है और अपने दिन रो-रो कर काट रही है। मैंने ऐसे क्या पाप किये, जिनका इतना बड़ा दण्ड मुझे मिल रहा है ? क्या अब ये दिन भी देखने पड़ेंगे ? आज यहाँ पड़े हैं, कल कहीं और पड़े होंगे। क्या अब घर की मान-मर्यादा भी बाहर-बाजार की गली-गली में...? हे भगवान ! पीहर में पिता के इन्हीं दुर्व्यसनों के कारण मेरी माँ और हम सब भाई-बहिन परेशान रहे और यहाँ पतिदेव भी ऐसे ही मिल गये। अब क्या होगा ?''

धनश्री भविष्य की भयंकर कल्पना से सिहर उठी, इस कारण उसे चक्कर-सा आ गया और वह गिरते-गिरते बची।

नारी स्वभाव के अनुसार धनश्री की उर्वरा चित्तभूमि में बचपन से ही अपने सुखमय जीवन जीने की असीम आशा-लताएँ अंकुरित हो रहीं थीं, पर उसके दुर्व्यसनी पिता और शराबी पति के कारण उसकी वे आशालताएँ पल्लवित होने से पहले ही मुरझा गईं।

यद्यपि पिता की दुर्दशा और माँ का दु:ख देखकर भी वह कम दु:खी नहीं थी; पर उसने उस समय तो किसी तरह अपने मन को समझा लिया था। वह सोचती ह्न

''बचपन का बहुभाग तो बीत ही गया। थोड़ा समय जो शेष है, वह भी भाई के सहारे बिता लूँगी। **सूखे बाँस को सीधा करने के प्रयत्न में उसके टूटने की ही अधिक संभावना रहती है,** अत: अब इस ढलती उम्र में पिता से कुछ कहना व्यर्थ ही है। अब यहाँ रहना ही कितना है, वर्ष-दो वर्ष में शादी हो जाएगी, नया घर बसेगा, फिर क्या? खूब आनन्द से रहेंगे।''

उसे क्या पता था कि उसके दुर्भाग्य की यात्रा कितनी लम्बी है ? अभी और कबतक ये दुर्दिन देखने पड़ेंगे। पति को इस हालत में देखकर उसकी आँखों के आगे अंधेरा छा गया। मानो उसका सारा भविष्य अंधकारमय हो।

जब उसकी शादी की बात उठी थी, सगाई का प्रस्ताव आया था, उस समय उसका भाई बहुत छोटा था, माँ की घर में कुछ चलती नहीं थी, मद्यपायी पिता मोहन अपनी स्थूल दृष्टि से केवल धनाढ्य घर और लड़के के बाह्य व्यक्तित्व को ही देख-परख पाया। श्रीसम्पन्न होने से ठाठ-बाट तो सेठों जैसे थे ही, देखने में लड़का भी हृष्ट-पुष्ट और सुन्दर था। लड़की की राय लेना, उसकी पसंदगी पूछना तो उस खानदान की तौहीन समझी जाती थी। समाज और कुटुम्बियों का सोच यह था कि ह्न ''माता-पिता जैसा अनुभव अभी बच्चों में थोड़े ही होता है और अपनी संतान को जान-बूझकर कौन गड्ढे में डालना चाहेंगे। फिर कल के छोकरे-छोकरियों को अभी पसंद-नापसंद करने की तमीज ही क्या है? पिता व परिवार को पीढ़ियों का अनुभव होता है। वे जो भी करेंगे, भला ही करेंगे।''

बस इसी मानसिकता के कारण किसी ने भी इस दिशा में धनश्री की राय जानने की कुछ भी पहल नहीं की, आवश्यकता ही नहीं समझी। सब कुछ धनश्री के पिता पर निर्भर रहा और शादी धनाढ्य धनेश के साथ कर दी गई। ❊

धनश्री का बचपन तो जैसा बीतना था, बीत ही गया। अब यौवन की जीवन यात्रा भी उसी तरह के अनिष्ट संयोगों में ही प्रारंभ हुई। बचपन से ही कल्पना लोक मे विचरने वाली धनश्री की कल्पनाओं पर, उसकी आशालताओं पर जब तुषारापात हुआ तो वह अर्द्धविक्षिप्त-सी हो गई। उसे अपने चारों ओर अनिष्ट...अनिष्ट...के ही दृश्य दिखाई देने लगे, अनिष्ट....अनिष्ट..अनिष्ट के ही स्वर सुनाई देने लगे।

उसके मुँह से एक ही बात निकलती ह्न '' अब मैं क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? कैसे कटेगी मेरी यह पहाड़-सी जिन्दगी इनके साथ ? इन्हें आये दिन पीना है, पीकर पागलों जैसा विवेकहीन होना है, विवेकहीन होकर हिंसक और आक्रामक होना है, कामोत्तेजित होना है और फिर न जाने क्या-क्या अनर्थ करना है ?

इससे इनकी सेहत तो खराब होनी ही है, मानसिक संतुलन भी कितना रख पायेंगे ? कुछ कहा नहीं जा सकता। ऐसी स्थिति में न इनकी बात का विश्वास किया जा सकता है, न व्यवहार का भरोसा। क्या पता कब/क्या कर बैठे ? शराब के नशे में व्यक्ति विवेकशून्य तो हो ही जाते हैं, उनकी वासनायें भी बलवती हो जाती हैं, फिर न स्वस्त्री-परस्त्री का विवेक, न इज्जत-आबरूकी परवाह।.....

हे भगवान ! ऐसी स्थिति में मैं तो एक दिन भी नहीं गुजार सकती इनके साथ। अब करूँ तो करूँ भी क्या?''

धनश्री के मन के कोने से आवाज आई ह्न ''हाँ, एक रास्ता है ह्न तलाक ? मन के दूसरे कोने से प्रश्न उठा ह्न क्या कहा तलाक ? अन्तर में विवेक ने समाधान किया ह्न **तलाक की कभी सोचना भी नहीं, तलाक का जीवन भी कोई जीवन है ? उससे तो मौत ही अच्छी है। तलाकशुदा नारियों को देख कामी कुत्तों की लार जो टपकती है ! वे उसे नोचने-चींथने को फिरते हैं। इसकी भी कल्पना की है कभी ? तलाकशुदा यौवना की मांसल देह को देख जो गुण्डे चारों ओर से गिद्धों की तरह मँडराते हैं, उनकी गिद्ध दृष्टि से बचना कितना कठिन है, यह भी सोचा कभी ?अरे ! नारी दैहिक व मानसिक दोनों दृष्टियों से कितनी कमजोर है, थोड़ी इसकी भी कल्पना कर ! थोड़ा धैर्य और विवेक से काम कर !** आखिर ये अपने पापकर्म के फल ही तो हैं। इस दण्ड से दूर भागूँगी तो अन्य अनेक अनिष्ट संयोगों का सामना करना पड़ सकता है।''

धनश्री आगे सोचती है ह्न ''अब तो मरना ही एक रास्ता है, पर बात मुझ तक ही सीमित होती तो और बात थी, पर अब तो धनेश की संतान भी मेरे पेट में पल रही है। ऐसी स्थिति में न मैं मर ही सकती हूँ और न जी ही सकती हूँ।

हे प्रभो ! यदि मरती हूँ तो आत्महत्या के साथ एक और मनुष्यजीव की हत्या का महापाप माथे पर लेकर मरना पड़ेगा, जो साक्षात् नरक गति का हेतु है और यदि जीवित रहती हूँ तो इन परिस्थितियों में जिऊँगी कैसे ?''

लोग कहते हैं ह्न ''घबड़ा मत ! 'आशा पर आसमान टिका है।' मैं भी इसी आशा पर तो अब तक जीवित हूँ, अन्यथा...।''

सोचा था ह्न ''शादी होगी, ससुराल चली जाऊँगी, वहाँ स्वर्ग जैसा

वातावरण मिलेगा तो यह सब भूल जाऊँगी; पर वे सब सपने धूल में मिल गये। एक नया निराशा का पहाड़-सा आगे आ गया, जिससे जीवन यात्रा का सारा रास्ता रुक गया। अब भविष्य में भी किसकी आशा करूँ ? आखिर संतान भी तो इन्हीं की है ?

हाय ! मेरे तो तीनों पन ही बिगड़ गये। मैं बर्बाद हो गई। हाय !....प्रभो ! नारी जीवन की यह कैसी विडम्बना है ? **पढ़े-लिखे होने पर भी इस तरह दुर्व्यसन में पड़ने का कारण इनका यह खोटा व्यवसाय ही है, न ये रिस्की धंधा करते और न नशे में पड़ते। अब यदि मेरी कूंख से पुत्र पैदा हुआ तो मैं ऐसे खोटे-धंधों की तो उस पर परछाईं भी नहीं पड़ने दूँगी।...**''

इस तरह सोचते-विचारते वह अचेत-सी हो गई, सो गई। बीच-बीच में कुछ सचेत होती तो उसे फिर वही घबड़ाहट शुरू हो जाती और बड़बड़ाने लगती ह्न ''हे भगवान ! **ऐसे अनायास होनेवाले उतार-चढ़ाव के धंधों के चक्कर में कोई शत्रु भी न पड़े, जिनमें लाभ होने पर भी चारित्रिक पतन और हानि होने पर भी गम भुलाने के लिए वही नशीली वस्तुओं का सहारा।** इतने पढ़े-लिखे हैं; कोई ऐसा धंधा देखना था, जिसमें आकुलता न होती; नींद हराम न होती, नशे का सहारा न लेना पड़ता। अरे ! अच्छे व्यक्तित्व की तो पहचान ही यह है कि वह अपना स्वतंत्र निर्णय ले। लीक पर चलने का तो अर्थ ही यह होता है कि स्वयं निर्णय लेने की क्षमता नहीं है। मैं उन्हें कहूँगी बंद करो यह सब खोटे धंधे और कोई अच्छा व्यापार करो। पैसा बहुत कुछ हो सकता है, पर सब कुछ नहीं। अतः आँख बन्द कर पैसे के पीछे पड़ना बुद्धिमानी नहीं है। पुण्य से प्राप्त पैसे का सदुपयोग करने का विवेक की जरूरत है।'' ●

९. सही साध्य हेतु सही साधन आवश्यक

ज्ञानेश ने मित्र के नाते धनेश को जब शेयर बाजार के धंधे की उलझनों में न पड़ने की सलाह दी तब तो धनेश ने उसकी सलाह को लापरवाही से सुनी-अनसुनी करके उसकी बातों पर ध्यान ही नहीं दिया; परन्तु जब वह शेयर भावों में अचानक होनेवाले उतार-चढ़ाव के झटकों को नहीं झेल पाया तो करोड़ों की कल्पनाओं में दौड़ लगाने वाला कुछ ही दिनों में रोड़ पर आकर खड़ा हो गया, घाटे में हुए ऋण से उऋण होने के लिए सब फैक्ट्रियाँ और कम्पनियाँ मिट्टी के मोल बेचने को बाध्य हो गया, तब उसे ज्ञानेश द्वारा दी गई सलाह की एक-एक बात याद आने लगी।

ज्ञानेश ने कहा था ह्न ''**पुण्य-पाप का खेल भी बड़ा विचित्र होता है। पुण्य-पाप के फल के अनुसार जीवन के खेल के पांसे पलटते ही रहते हैं। जहाँ एक ओर पापों के फल में दुर्भाग्य का दैत्य धक्का देकर ओंधे मुँह गिरा देता है, वहीं दूसरी ओर पुण्य के फल में सौभाग्य स्वयं साकार रूप धर कर संभाल भी लेता है; परन्तु यह हम पर निर्भर करता है कि हम किसे आमंत्रण दें, पुण्य को या पाप को ? यदि हम पुण्य को आमंत्रण देना चाहते हैं तो हमें सत्कर्म ही करने होंगे। यदि हमारे द्वारा दूसरों को किसी भी कारण कोई भी पीड़ा पहुँचती है तो इससे बड़ा दुनिया में अन्य कोई दुष्कर्म नहीं है और दूसरे जीवों की रक्षा करने से, उनका भला करने से बढ़कर कोई पुण्य का कार्य नहीं है। एतदर्थ महाकवि तुलसीदासजी की इस बात को याद रखना होगा ह्न**

'परहित सरिस धर्म नहिं भाई, पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।''

ज्ञानेश का यह कथन स्मरण आते ही पहले तो उसे इस बात का पश्चाताप हुआ कि ''मैंने अपने बिजनेश में दूसरों को नीचा गिरा कर खुश होने में, उन्हें दुःखी करके मजा लेने में कोई कसर नहीं छोड़ी। इन खोटे परिणामों रूप पाप का फल तो मिलना ही था सो मिल गया। अस्तु! अब मैं ऐसी भूल कभी नहीं करूँगा।...''

धनेश ने अपने एक-एक धंधे पर दृष्टि दौड़ाई; परंतु इस दृष्टि से अब प्रायः सभी काम-धंधे उसकी समझ से परे हो गये थे; क्योंकि उसके सभी धंधे ऐसे थे, जिनमें हार्ड काम्पटीशन था। दूसरों को गिराये बिना आगे नहीं बढ़ा जा सकता था। यह भी तो पाप ही है। नम्बर एक और दो का चक्कर भी कम नहीं था।

पुण्ययोग से धनेश को भी ज्ञानेश की भांति ही घर बैठे एक ऐसा बिजनिस हाथ लग गया; जिसमें न किसी का शोषण था और न जो किसी के मानसिक कष्ट का कारण था तथा न उसमें विशेष पूंजी की जरूरत पड़ी और न मार्केट में दुकान उपलब्ध होने की समस्या से जूझना पड़ा। दुकानदारी या नौकरी की भाँति समय का बंधन भी नहीं था; झूठ, धोखाधड़ी, मायाचारी और कर-चोरी जैसे किसी बड़े पाप प्रवृत्ति में पड़ने की बाध्यता भी नहीं थी। जिसमें लाभ भले प्रारंभ में कभी कम, कभी अधिक हुआ, परन्तु हानि का तो कुछ काम ही नहीं था। इसप्रकार वह बिजनेश तो सब तरह से अच्छा है ही, संगति भी भले लोगों की ही मिलती है; क्योंकि यह बिजनेश ही विश्वास और नैतिकता का है, वैसे भी व्यापार में व्यसनी का कौन विश्वास करे ? अतः दुर्व्यसन छोड़ना तो सभीप्रकार के व्यापारों में सफलता पाने के लिए व्यक्ति की बाध्यता है। फिर वर्तमान बिजनेश जो उसे हाथ लगा, उसमें तो दुर्व्यसनी चल ही नहीं सकते थे। अतः धनेश ने प्रतिज्ञापूर्वक दुर्व्यसन त्याग दिए तथा इसमें परस्पर एक-दूसरे की उन्नति चाहना, सहयोग करना स्वयं की सफलता के लिए भी आवश्यक है।

वस्तुतः यह बिजनेश ही ऐसा है, जिसमें दूसरों को आगे बढ़ाने में दूसरों की सफलता और उन्नति में ही अपनी सफलता एवं उन्नति छिपी होती है। इसकारण परस्पर में एक दूसरे के प्रति ईर्ष्या-द्वेष की तो कोई बात ही नहीं है। इस बिजनेश के उत्पाद भी सर्वश्रेष्ठ हैं।

धनेश को तो यह बिजनिस सर्वोत्तम अच्छा लगा ही, वह चाहता है कि वह यह बिजनेश अपने अन्य साथियों एवं ज्ञानेश को भी बताये। उसे पता नहीं था कि ज्ञानेश भी इसी बिजनेश को कर रहा है।

ज्ञानेश बताना चाहता था, पर धनेश ने अपने अहं में उसकी बात कभी ध्यान से सुनी ही नहीं। धनेश हिम्मत नहीं जुटा पा रहा था कि ''मैं ज्ञानेश से कैसे कहूँ ? वह तो दुनिया को समझाता है।''

वह सोचता ह्न ''जो सदैव संतोष धन की ही महिमा गाता रहता हो, जिसे 'सन्तोषधन' की तुलना में 'भौतिकधन' सचमुच धूल जैसा तुच्छ लगने लगा होगा। इसकारण सहज-सुलभ और सीमित साधनों में ही सदा सन्तुष्ट रहने की जिसकी आदत सी बन गई है; उसे पुनः लीक से हटकर धनार्जन की उपयोगिता समझाना सरल काम नहीं है; परन्तु दिन-प्रतिदिन अपनी सीमाओं को लांघती हुई बांस की भाँति बढ़ती मंहगाई और दिन-प्रतिदिन बढ़ती आवश्यक आवश्यकताओं के इस युग में कोई कितना भी मितव्ययी क्यों न हो, फिर भी अचानक असीमित अनिवार्य खर्च भी तो आ ही जाते हैं, उनकी आपातकालीन आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु भी तो पर्याप्त धन के बिना काम नहीं चल सकता। पूरे परिवार के जीवन निर्वाह की सम्पूर्ण जिम्मेदारी

तो अकेले ज्ञानेश पर है ही, उसके बूढ़े माता-पिता भी हैं, जिन्हें कभी भी कुछ भी आपातकालीन स्थिति आ सकती है।

भले ही हम लाखों लाख शुभ कामनायें करें ह्न कभी किसी को कोई आपत्ति न आये; पर मात्र हमारे चाहने से क्या होता है ? असंभव तो कुछ भी नहीं है। मान लो, किसी को हार्टअटेक ही आ गया और तत्काल ऑपरेशन कराना पड़ा तो तीन-चार लाख से भी पूरा नहीं पड़ता आज के युग में। वह इतना पैसा लायेगा कहाँ से?

आज दैनिक घरेलू खर्च भी कम नहीं होते। मंहगाई आसमान को छू रही है। ऐसी स्थिति में यदि उसके पास पर्याप्त आर्थिक साधन नहीं हुए तो क्या बीतेगी उस बेचारे पर ? किसके सामने हाथ फैलायेगा वह? किसी पर भी ऐसा भरोसा नहीं किया जा सकता कि हाथ फैलाने पर भी समय पर सहयोग मिल ही जायेगा। अत: अपनी स्वयं की आजीविका का स्थाई और पर्याप्त साधन तो होना ही चाहिए।

धर्मात्मा होने का अर्थ दरिद्रता तो नहीं है। दरिद्रता तो सद्गृहस्थ के लिए अभिशाप है अभिशाप। एतदर्थ उचित आय के साधनों की जरूरत तो धर्मात्माओं को भी है ही; परन्तु उसके गले यह बात कैसे उतरेगी ? यद्यपि कुछ दम नहीं रही। केवल ब्याज के बलबूते पर अकेला दैनिक खर्च चलाना ही कठिन है। हो सकता है अब उसकी समझ में मेरी बात आ जाय ?

एक बार कोशिश करने में हर्ज ही क्या है ? फिर यह बिजनिस तो उसके लिए वरदान साबित होगा; क्योंकि जो वह चाहता है, वे सब बातें इस बिजनिस में हैं।''

इन विचारों में डूबे धनेश को रात भर नींद नहीं आई। धनेश के ऊपर ज्ञानेश का बहुत बड़ा उपकार भी है। ज्ञानेश के सन्मार्गदर्शन से ही धनेश के जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ था। उसने नैतिक मूल्यों का मार्गदर्शन देते समय ज्ञानेश से यह सूक्ति भी सुनी थी कि **'नहि कृतमुपकारं साधवो विस्मरन्ति'**, फिर भला धनेश ज्ञानेश के उपकार को कैसे भुला सकता है?

उसने सोचा ह्न ''जिस व्यक्ति ने मुझे ऐसे सन्मार्ग पर लगाया, जिससे मुझे जीवनदान मिला, मेरे पूरे परिवार का उद्धार हुआ, उसके लिए मैं जो भी कर सकूँ, कम ही है।''

प्रात: होते ही धनेश नित्यकर्म से निबटकर ज्ञानेश के पास गया और उसने रात भर अपने विचारों के अन्तर्द्वन्द से ज्ञानेश को अवगत कराया। ज्ञानेश ने पहले तो उसके कथन को पूर्ण गंभीरता से सुना और फिर मुस्करा कर कहा - ''मैं तुम्हारी नेक सलाह की कद्र करता हूँ; और तुमने जो कदम उठाया है, उसके लिए बधाई देता हूँ।''

जीवन निर्वाह के लिए स्थिर आजीविका तो चाहिए ही। एतदर्थ मैंने भी बहुत सोचा था और इस दिशा में यह निश्चय किया था कि ह्न'मैं भी अर्थोपार्जन हेतु काम तो करूँगा; परन्तु ऐसा कोई काम नहीं करूँगा, जिससे गरीबों का शोषण हो, जो शासन की दृष्टि में अपराध हो और अनैतिक हो, आकुलतावाला हो, अधिक रिस्की हो, निन्दनीय हो।''

ज्ञानेश की बातें सुनकर धनेश मन ही मन प्रसन्न हुआ, उसने सोचाह्न ''मेरा काम बन ही गया समझो; क्योंकि मैंने जो बिजनिस शुरू किया है, उसमें तो ये सब विशेषतायें है।'' धनेश ने ज्ञानेश के विचारों से सहमति जताते हुए कहा ह्न ''आपका कहना बिल्कुल सच है ह्न ऐसा ही कोई काम देखेंगे, जो आपके विचारों के अनुकूल होगा।''

ज्ञानेश ने कहा ह्न ''यह दुकान भी अब मुझे नहीं पुसाती; क्योंकि दिनभर दुकान पर बैठे ग्राहकों का ही चिन्तन करते रहो; जैसे बगुला पानी पर एक टांग से खड़ा रहकर मछली का चिन्तन करता है, उसीतरह दुकानदार ग्राहक का चिन्तन करता है, उसके लिए एक-एक ग्राहक परमेश्वर जैसा अन्नदाता लगता है। इसकारण भगवान का ध्यान छोड़कर दिनभर ग्राहकों का ही ध्यान चलता है।

ऐसा धंधा भी किस काम का जिसमें निरन्तर पाप का ही परिणाम चलता रहे।'' ●

शिक्षण-शिविर सम्पन्न

1. अजमेर (राज.) : श्री वीतराग-विज्ञान स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट अजमेर के तत्त्वावधान में वीतराग-विज्ञान भवन में दिनांक 20 से 28 जून तक सोलहवाँ बाल व युवा चेतना शिविर आयोजित किया गया।

शिविर में युवा एवं प्रौढ वर्ग के लिए पण्डित कमलचन्दजी पिड़ावा द्वारा प्रात: समयसार एवं रात्रि में छहढाला विषय की कक्षा ली गई। बालकों की कक्षायें पण्डित अभिषेक जैन व पण्डित आशुतोष जैन मंगलायतन ने ली; जिसमें बालकों को पूजन-प्रशिक्षण का ज्ञान भी दिया गया।

अन्त में परीक्षा लेकर उत्तीर्ण छात्रों को पुरस्कृत किया गया तथा ट्रस्ट के ट्रस्टी श्री पूनमचन्दजी लुहाडिया द्वारा विद्वत्वर्ग व शिविरार्थियों का आभार व्यक्त किया गया।

दिनांक 28 जून को वैशाली नगर, अजमेर स्थित ट्रस्ट की भूमि पर ऋषभायतन निर्माण हेतु पंचपरमेष्ठी पूजन, आदिनाथ पूजन, भक्तामर पूजन व विनायक यंत्र पूजन पूर्वक भूमि शुद्धि की गई। सम्पूर्ण विधि पण्डित कुमुदचन्द्रजी सोनी के निर्देशन में सम्पन्न हुई।

2. राधौगढ़ (म.प्र.) : यहाँ कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट के तत्त्वावधान में दिनांक 15 से 22 जून 2006 तक बाल संस्कार शिविर सानन्द सम्पन्न हुआ।

शिविर में पण्डित अंकितजी शास्त्री खनियांधाना, पण्डित नीलेशजी शास्त्री अलवर एवं पण्डित किशोरजी धोंगड़े रहाटगाँव के प्रवचन एवं कक्षाओं के माध्यम से बालकों को जैनधर्म का स्वरूप समझाया गया।

रात्रि में जिनेन्द्रभक्ति एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम भी सम्पन्न हुये।

विद्वत्परिषद् की मीटिंग 30 जुलाई को

दिनांक 30 जुलाई, 2006 को अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद् के अध्यक्ष पद पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल का सर्वसम्मति से चुना जाना लगभग तय है। उनको इस पद पर दूसरी बार चुना जाएगा। उनके नाम पर सर्वसम्मति बनी है।

राष्ट्रीय कार्यकारिणी के अन्य 20 पदाधिकारियों का चयन 30 जुलाई को टोडरमल स्मारक भवन में आयोजित बैठक में होगा। **ह्न अखिल बंसल**

जैन जी.के. अब अंग्रेजी में

बालकों को जिनागम का सामान्य ज्ञान कराने वाली डॉ. शुद्धात्मप्रभा टडैया द्वारा लिखित जैन जी.के. संस्करणों का अंग्रेजी में शीघ्र प्रकाशन होने जा रहा है। जो महानुभाव पुस्तक मंगाना चाहते हों, वे निम्न फोन नम्बर पर सम्पर्क करें ह्न प्रकाशन-मंत्री श्री अविनाश टडैया, फोन नं. (022) 28943250/65750723, मो. 09829123722

गोष्ठी सानन्द सम्पन्न

1. **जयपुर (राज.) :** यहाँ श्री टोडरमल स्मारक भवन में श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय का नवीन सत्र एवं विद्यालयीन समस्त गतिविधियाँ प्रारंभ हो चुकी है; जिसमें प्रथम साप्ताहिक गोष्ठी दिनांक 2 जुलाई, 2006 को **द्रव्य-गुण-पर्याय : एक अनुशीलन** विषय पर आयोजित की गई।

गोष्ठी की अध्यक्षता पण्डित शांतिकुमारजी पाटील ने की तथा मुख्य अतिथि श्री अश्विनभाईजी जैन मुम्बई थे। गोष्ठी का संचालन अमित जैन गुना एवं मंगलाचरण सौरभ जैन अमरमऊ ने किया। गोष्ठी में श्रेष्ठ वक्ता का स्थान महेन्द्र मिरकुटे पानकन्हेरगाँव एवं विवेक जैन पिड़ावा ने प्राप्त किया।

2. इसी शृंखला में दिनांक 9 जुलाई, 2006 को **सात तत्त्व : एक विवेचन** विषय पर आयोजित गोष्ठी की अध्यक्षता पण्डित नन्दकिशोरजी मांगुलकर काटोल ने की।

गोष्ठी में प्रथम स्थान उपाध्याय वर्ग से मुक्ति जैन मुम्बई एवं शास्त्री वर्ग से अंकित जैन लूणदा ने प्राप्त किया। संचालन अनुप्रेक्षा जैन मुम्बई व मंगलाचरण आकाश जैन खनियांधाना ने किया। **ह्न रोहन रोटे व अंकुर जैन**

बाल संस्कार शिविर एवं वेदी शुद्धि सम्पन्न

उज्जैन (म.प्र.) : कुन्दकुन्द प्रवचन-प्रसारण संस्थान एवं जैन युवा फैडरेशन उज्जैन के संयुक्त तत्त्वावधान में महावीर मन्दिर एवं सीमन्धर मन्दिर ट्रस्ट के सान्निध्य में छठवाँ बाल संस्कार शिविर एवं नूतन वेदी शुद्धि का कार्यक्रम सानन्द सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर पण्डित विमलचन्दजी झांझरी एवं पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी के प्रवचनों तथा पण्डित विरागजी शास्त्री जबलपुर, पण्डित आशीषजी शास्त्री टीकमगढ़, पण्डित प्रियंकजी शास्त्री रहली की विभिन्न कक्षाओं का लाभ मिला।

वेदी शुद्धि के समस्त कार्य पण्डित सुनीलकुमारजी'धवल' भोपाल एवं पण्डित क्रान्तिकुमारजी पाटनी इन्दौर ने सम्पन्न कराये।

शिविर में आयोजित ज्ञानवर्धक कार्यक्रमों से लगभग 300 बच्चे संस्कारित हुये। **ह्न जम्बू जैन**

वैराग्य समाचार

1. **इन्दौर निवासी** श्री मांगीलालजी छाबड़ा का दिनांक 5 जून, 2006 को वीतरागी देव-गुरु-धर्म की आराधना पूर्वक शांतपरिणामों से देहावसान हो गया है। आप अनेक वर्षों तक सोनगढ़ तथा जयपुर के शिविरों में आकर तत्त्वज्ञान का लाभ लिया करते थे।

ज्ञातव्य है कि आप पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा के बड़े भाई थे। आपकी स्मृति में आपके सुपुत्र श्री कैलाशचन्दजी छाबड़ा की ओर से जैनपथप्रदर्शक और वीतराग-विज्ञान को 502/-रुपये प्राप्त हुये।

2. **भोपाल निवासी** पण्डित गुलाबचन्दजी जैन का दिनांक 13 जून,06 को शांत परिणामों से देहावसान हो गया। आप जैन दर्शन के अच्छे विद्वान थे; पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट की ओर से दसलक्षण एवं अष्टान्हिका महापर्व पर प्रवचनार्थ जाया करते थे।

दिवगंत आत्मायें शीघ्र ही अभ्युदय को प्राप्त हों ह्न यही भावना है।

जिनमंदिर का शिलान्यास

शिवपुरी (म.प्र.) : यहाँ स्वाध्यायप्रेमी सेवानिवृत्त इन्जीनियर श्री सुरेशचन्दजी जैन ने आध्यात्मिक वातावरण से प्रभावित होकर स्वतंत्र निर्विघ्न रूप से धर्माराधना हेतु एवं सम्पूर्ण कॉलोनी को आध्यात्मिक वातावरण प्रदान करने के लिये दिनांक 6 जुलाई, 2006 को एक जिनमंदिर के निर्माण का शिलान्यास अध्यात्म रत्नाकर पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल जयपुर के करकमलों से कराया। समारोह में ध्वजारोहण श्री वीरचन्दजी सर्राफ भिण्ड ने किया।

विशेष उल्लेखनीय यह है कि यहाँ 6 जिनमंदिर हैं; परन्तु सभी मंदिर लगभग 3 कि.मी. दूरी पर हैं। अत: यहाँ मन्दिर की अति आवश्यकता अनुभव की जा रही थी। इस हेतु सभी मन्दिरों के अधिकारियों और समस्त जैन समाज का पूर्ण समर्थन तो था ही, लगभग 1500 आत्मार्थियों की उपस्थिति से समस्त वातावरण हर्षित था। शिलान्यास विधि पण्डित लालजी-रामजी विदिशा ने सम्पन्न कराई। इस अवसर पर ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना एवं डॉ. कपूरचन्दजी कौशल भोपाल भी उपस्थित थे।

इसी अवसर पर अष्टान्हिका पर्व के उपलक्ष्य में दिग. जैन छतरीवाला मंदिर में श्री राजेन्द्रकुमारजी जैन की ओर से सिद्धचक्र मण्डल विधान चल रहा था। विधि-विधान के समस्त कार्य पण्डित लालजीरामजी विदिशा ने सम्पन्न कराये। इस अवसर पर डॉ. कपूरचन्दजी कौशल एवं ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना के प्रतिदिन प्रवचन तो चल ही रही थे साथ ही शिलान्यास हेतु पधारे पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल के पाँच प्रवचनों से प्रभावित होकर समाज में एकता का वातावरण बना।

यह नूतन शांतिनाथ कुन्दकुन्द जिनमंदिर स्व.श्री मानमलजी सर्राफ की पुण्यस्मृति में उनके सुपुत्र श्री सर्वज्ञशरण, अभयकुमार, कैलाशचन्द, बच्चनलाल, सुरेशचन्द एवं अरुणकुमार परिवार की ओर से हो रहा है।

इस अवसर पर 7000/- रुपये का सत्साहित्य घर-घर पहुँचा तथा जैनपथप्रदर्शक को 501/- रुपये प्राप्त हुये। **ह्न सुनील शास्त्री**

(पृष्ठ 7 का शेष .... प्रवचनसार का सार)

है कि शरीर की उत्पत्ति में निमित्तभूत हे माँ, हे पिता ! न तुम मेरे माँ- बाप हो और न मैं तुम्हारा बेटा। अब मैं आत्मकल्याण के लिए जा रहा हूँ। इस भाषा के रूप में 'आज्ञा लेना' का तात्पर्य मात्र सूचना देना ही तो हुआ।

पूज्य गुरुदेवश्री भी इस प्रकरण को बहुत मार्मिक ढंग से प्रस्तुत करते थे और कहते थे कि देखो! यहाँ निश्चय-व्यवहार की कितनी मनोरम संधि है। हे माँ, हे पिता ! ह्न ऐसा कहकर तो व्यवहार की स्थापना की और शरीर की उत्पत्ति में निमित्तभूत माँ और पिता ह्न ऐसा कहकर निश्चयनय की स्थापना की। 'हे माँ और हे पिताजी' से संबोधित कर व्यवहार की मर्यादा को भंग नहीं होने दिया और 'आपका और मेरा संबंध तो देह से है, आत्मा से नहीं' ऐसा कहकर तत्त्वज्ञान कराया। एक प्रकार से उस संबंध का निषेध कर निश्चय का प्रतिपादन किया।

निश्चय से तो आज्ञा लेने की आवश्यकता ही नहीं है, व्यवहार से ही दीक्षा के लिए आज्ञा माँगी जाती है। अरे भाई! माँ-बाप से दीक्षा लेने की आज्ञा लेने का तात्पर्य मात्र उन्हें इस संबंध में सूचना देना ही है; अत: अनुमति देने, नहीं देने का प्रश्न ही नहीं है। दीक्षा लेनेवाले कभी इसप्रकार से नहीं पूछते हैं कि 'मैं दीक्षा लूँ या नहीं ?' अपितु माँ-बाप से यह कहते हैं कि 'मैं दीक्षा लेने जा रहा हूँ'। **(क्रमश:)**

प्रवचनसार का सार 55

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

अब ज्ञेयतत्वप्रज्ञापन महाधिकार की समापन की अंतिम गाथा कहते है ह्न

तम्हा तह जाणित्ता अप्पाणं जाणगं सभावेण।
परिवज्जामि ममत्तिं उवट्ठिदो णिम्ममत्तम्हि ।।२००।।

(हरिगीत)

इसलिए इस विधि आतमा ज्ञायकस्वभावी जानकर।
निर्ममत्व में स्थित मैं सदा ही भाव ममता त्याग कर।।

ऐसा होने से अर्थात् शुद्धात्मा में प्रवृत्ति के द्वारा ही मोक्ष होता होने से इसप्रकार आत्मा को स्वभाव से ज्ञायक जानकर मैं निर्ममत्व में स्थित रहता हुआ ममता का परित्याग करता हूँ।

इस गाथा की टीका का भाव इसप्रकार है ह्न

''मैं यह मोक्षाधिकारी, ज्ञायकस्वभावी आत्मतत्व के परिज्ञानपूर्वक ममत्व की त्यागरूप और निर्ममत्व की ग्रहणरूप विधि के द्वारा सर्व आरम्भ से शुद्धात्मा में प्रवृत्त होता हूँ; क्योंकि अन्य कृत्य का अभाव है।

प्रथम तो मैं स्वभाव से ज्ञायक ही हूँ; केवल ज्ञायक होने से मेरा विश्व समस्त पदार्थों के साथ ही सहज ज्ञेय-ज्ञायकलक्षण सम्बन्ध ही है; किन्तु अन्य स्वस्वामिलक्षणादि सम्बन्ध नहीं है; इसलिये मेरा किसी के प्रति ममत्व नहीं है, सर्वत्र निर्ममत्व ही है।

अब, एक ज्ञायकभाव का समस्त ज्ञेयों को जानने का सद्भाव होने से, क्रमश: प्रवर्तमान, अनंत, भूत-वर्तमान भावी विचित्र पर्याय समूह वाले, अगाधस्वभाव और गम्भीर ऐसे समस्त द्रव्यमात्र को मानों वे द्रव्य ज्ञायक में उत्कीर्ण हो गये हों, चित्रित हो गए हों, भीतर घुस गये हों, कीलित हो गये हों, डूब गये हों, समा गये हों, प्रतिबिम्बित हुए हों ह्न इसप्रकार एक क्षण में ही जो (शुद्धात्मा) प्रत्यक्ष करता है, ज्ञेय-ज्ञायक लक्षण संबंध की अनिवार्यता के कारण ज्ञेय-ज्ञायक को भिन्न करना अशक्य होने से विश्वरूपता को प्राप्त होने पर भी जो (शुद्धात्मा) सहज अनन्त शक्तिवाले ज्ञायकस्वभाव के द्वारा एकरूपता को नहीं छोड़ता, जो अनादि संसार से इसी स्थिति में (ज्ञायकभावरूप ही) रहा है और जो मोह के द्वारा दूसरे रूप में जाना-माना जाता है; उस शुद्धात्मा को यह मैं मोह को उखाड़ फेंककर, अतिनिष्कम्प रहता हुआ यथास्थित (जैसा का तैसा) ही प्राप्त करता हूँ।

इसप्रकार दर्शनविशुद्धि जिसका मूल है ऐसी, सम्यग्ज्ञान में उपयुक्तता के कारण अत्यन्त अव्याबाध (निर्विघ्न) लीनता होने से, साधु होने पर भी साक्षात् सिद्धभूत ऐसा यह निज आत्मा को तथा तथाभूत (सिद्धभूत) परमात्माओं को, उसी में एक परायणता जिसका लक्षण है ऐसा भाव नमस्कार सदा ही स्वयमेव हो।''

यहाँ आचार्य कहते हैं कि जब आत्मा को उपरोक्त प्रकार से माना; तब भाव नमस्कार स्वयमेव सदा हो ही रहा है। आचार्यदेव कहते हैं कि जब हमने नमस्कार किया, केवल तभी नमस्कार नहीं किया; अपितु जब हम नमस्कार नहीं करते हैं, तब भी हमारा नमस्कार है, हमारा नमस्कार निरन्तर हो ही रहा है।

तदुपरान्त इस गाथा के बाद जो इस अधिकार के अंत में कलश लिखे गए हैं, उनमें भी यही बात कही गई है। ●

इक्कीसवाँ प्रवचन

प्रवचनसार परमागम के ज्ञानतत्त्वप्रज्ञापन और ज्ञेयतत्त्वप्रज्ञापन महाधिकारों पर विस्तार से चर्चा हो चुकी है। इसके बाद चरणानुयोग सूचक चूलिका पर चर्चा करना है। इसी के अंत में परिशिष्ट के रूप में 47 नयों का प्रकरण भी है।

यह चरणानुयोग सूचक चूलिका मन्दिर के शिखर और उस पर चढाये गये कलश के समान है। ज्ञानस्वभाव और ज्ञेयस्वभाव के स्वरूप का निरूपणरूपी मंदिर तो बन चुका है; अब उस पर शिखर बनाना है और उसके भी ऊपर कलश चढाना है।

यद्यपि आचार्य अमृतचन्द्र इसे महाधिकार के रूप में स्वीकार नहीं करते; इसीकारण वे इसे चूलिका कहते हैं; पर आचार्य जयसेन इसे चारित्र महाधिकार कहते हैं।

जो कुछ भी हो; पर इसमें जो विषयवस्तु है; वह अपने आप में अत्यन्त उपयोगी और अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।

चरणानुयोग सूचक चूलिका की तत्त्वप्रदीपिका टीका लिखते हुए आचार्य अमृतचन्द्र मंगलाचरण के रूप में लिखते हैं कि ह्न

(इन्द्रवज्रा)

द्रव्यस्य सिद्धौ चरणस्य सिद्धि, द्रव्यस्य सिद्धिश्चरणस्य सिद्धौ।
बुद्ध्वेति कर्माविरता: परेऽपि, द्रव्याविरुद्धं चरणं चरंतु।।१३।।

(दोहा)

द्रव्यसिद्धि से चरण अर चरण सिद्धि से द्रव्य।
यह लखकर सब आचरो द्रव्यों से अविरुद्ध।।१३।।

द्रव्य की सिद्धि में चरण की सिद्धि है और चरण की सिद्धि में द्रव्य की सिद्धि है ह्न यह जानकर, कर्मों से (शुभाशुभभावों से) अविरत दूसरे भी, द्रव्य से अविरुद्ध चरण (चारित्र) का आचरण करो।

द्रव्यानुयोग के अनुसार वस्तु का सही स्वरूप समझ में आने के बाद ही चारित्र की सिद्धि होती है अर्थात् द्रव्य की सिद्धि में ही चारित्र की सिद्धि विद्यमान है। अब यदि कोई द्रव्यानुयोग के माध्यम से तत्त्वज्ञान तो समझ लें; किन्तु उसे जीवन में नहीं उतारे, आचरण में न लावे तो उसका उसको कोई लाभ नहीं है; इसलिए ही यह कहा जा रहा है कि चारित्र की सिद्धि में ही द्रव्य की सिद्धि विद्यमान है।

इसीलिए आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने सर्वप्रथम तो ज्ञानतत्वप्रज्ञापन और ज्ञेयतत्वप्रज्ञापन अधिकार लिखकर द्रव्यानुयोग के माध्यम से मुक्ति के मार्ग का प्रतिपादन किया और ज्ञान तथा ज्ञेय के विभाग करने की प्रक्रिया बताई और अब आचार्यदेव यह कहना चाहते हैं कि अभीतक मैंने जो तत्त्वज्ञान समझाया है, हे शिष्यगण ! तुम वह तत्त्वज्ञान समझकर जीवन में उतारो।

जीवन में वह तत्त्वज्ञान कैसे उतारे ? इसी प्रश्न का उत्तर देनेवाली यह चरणानुयोग सूचक चूलिका है।

चरणानुयोग सूचक चूलिका की प्रथम गाथा इसप्रकार है ह्न

एवं पणमिय सिद्धे जिणवरवसहे पुणो पुणो समणे।
पडिवज्जदु सामण्णं जदि इच्छदि दुक्खपरिमोक्खं।।२०१।।

(हरिगीत)

हे भव्यजन ! यदि भवदुखों से मुक्त होना चाहते।
परमेष्ठियों को कर नमन श्रामण्य को धारण करो।।

हे शिष्यगण ! यदि दु:खों से मुक्त होने की इच्छा हो तो पूर्वोक्त प्रकार से बारम्बार सिद्धों को, जिनवरवृषभ आदि अरिहंतों को तथा श्रमणों को प्रणाम करके श्रामण्य को अंगीकार करो।

यहाँ पर 'एवं' शब्द कहकर आचार्य प्रवचनसार ग्रन्थ के प्रारम्भ की उन तीन गाथाओं की ओर संकेत करना चाहते हैं; जिनके माध्यम से पंचपरमेष्ठी को नमस्कार किया गया था।

तात्पर्य यह है कि जिसप्रकार ग्रंथ के आरंभ में सिद्धों, अरहंतों और श्रमणों को नमस्कार किया है; उसीप्रकार यहाँ भी उन्हें नमस्कार करके मुनिपद अंगीकार करो।

ग्रन्थ के प्रारम्भ में तो प्रतिज्ञावाक्य में यह कहा था कि मैं प्रवचनसार को कहूँगा और यहाँ इस गाथा में आचार्य कह रहे हैं कि 'श्रामण्यपने को अंगीकार करो'। 'श्रामण्यपने को किसप्रकार अंगीकार किया जाता है' ह्न यह बात बताने की प्रतिज्ञा करके आचार्यदेव ने उसकी प्राप्ति करने का उपाय बताना भी आरंभ कर दिया है।

यहाँ पर २०१वीं गाथा की टीका की जो अंतिम पंक्ति है, वह ध्यान देने योग्य है ह्न

यथानुभूतस्य तत्प्रतिपत्तिवर्त्मन: प्रणेतारो वयमिमे तिष्ठाम इति ह्न उस श्रामण्य को अंगीकार करने के यथानुभूत मार्ग के प्रणेता हम यह खड़े हैं न।

इस पंक्ति को पढ़कर ऐसा लगता है कि जैसे किसी शिष्य ने आचार्यदेव से ऐसा प्रश्न किया हो कि ह्न ''आप जो श्रामण्य को अंगीकार करने की बात कर रहे हो, तो क्या यह संभव है ? तन पर वस्त्र नहीं रखना, भोजन नहीं करना, भोजन करने में भी अपने हाथ से बनाने की बात ही नहीं; यदि कोई स्वयं के लिए बनाए तो उसमें से भी विधिपूर्वक लेना ह्न यह सब संभव है क्या ?''

तब आचार्यदेव ने इस पंक्ति के रूप में उत्तर दिया हो कि इस मार्ग के प्रणेता हम खड़े हैं न ? स्वयं को 'प्रणेता' कहकर आचार्यश्री शिष्यों को हिम्मत दे रहे हैं। हमें ये शब्द सुनकर ऐसा लग सकता है कि ये अभिमान से भरे शब्द हैं; किन्तु ये अभिमान से भरे शब्द न होकर आत्मविश्वास से भरे शब्द हैं अर्थात् शिष्यों में आत्मविश्वास भरनेवाले शब्द हैं।

यह वह पंक्ति है, जिस पंक्ति को पढ़ने के बाद गुरुदेवश्री उछल पड़े थे। वे इन शब्दों पर इतने रीझ गये थे, इतने भावविह्वल हो गये थे कि मानो अमृतचन्द्राचार्य साक्षात् ही उनसे यह कह रहे हों कि हम खड़े हैं न, क्यों चिन्ता करते हो ?

इसके बाद श्रमण होने की प्रक्रिया में क्या-क्या है ? इसका स्वरूप बतानेवाली गाथा इसप्रकार है ह्न

आपिच्छ बंधुवग्गं विमोचिदो गुरुकलत्तपुतेहिं।
आसिज्ज णाणदंसणचरित्ततवरीरियायारं ।।२०२।।

(हरिगीत)

वृद्धजन तियपुत्रबंधुवर्ग से ले अनुमति।
वीर्य-दर्शन-ज्ञान-तप-चारित्र अंगीकार कर।।२०२।।

बंधुवर्ग से पूछकर और बड़ों से तथा स्त्री-पुत्र से छूटकर ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार और वीर्याचार को अंगीकार करके....।

इस गाथा की टीका में आचार्य अमृतचन्द्र ने बड़ा ही मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है। जब कोई व्यक्ति दीक्षा लेता है या लेना चाहता है, तो वह क्या करता है या उसे क्या करना चाहिए ह्न इस बात को उन्होंने बड़े ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है; जो मूलत: पठनीय है।

इस गाथा में कथित बंधुवर्ग से तात्पर्य कुटुम्बीजन से है और '**गुरुकलत्तपुत्तेहिं**' में गुरु का अर्थ माता-पिता, कलत्र का अर्थ पत्नी और पुत्तेहिं का अर्थ पुत्र-पुत्रियाँ हैं।

इस गाथा में आचार्यदेव ने शब्दों का चयन बड़ी सावधानी एवं बुद्धिमानी से किया है। बंधुवर्ग के साथ तो 'पूछकर' और माता-पिता आदि के साथ 'छूटकर' शब्दों का प्रयोग किया है। दीक्षा के लिए यदि बंधुवर्ग से पूछा जाता है तो वे सहज ही आज्ञा दे देते हैं; लेकिन माँ-बाप, पत्नी-बच्चे आदि आसानी से छोड़ने को तैयार नहीं होते। वर्तमान में जिन्हें 'वन फैमिली' कहा जाता है और जो सबसे ज्यादा निकटतम होते हैं; उनमें माँ-बाप एवं पति-पत्नी और बच्चे ही आते हैं।

इसप्रकार कुटुम्बीजन अर्थात् बंधुवर्ग एवं माँ-बाप, पत्नी आदि के विभाग से आचार्यदेव ने दो विभाग किए, जिसमें बंधुवर्ग के लिए तो 'पूछकर' एवं माता-पिता आदि के लिए 'छूटकर' शब्दों का प्रयोग किया।

यहाँ एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि यदि माँ-बाप ने दीक्षा लेने की अनुमति नहीं दी तो क्या होगा ? ऐसी स्थिति में उनकी अनुमति के बिना दीक्षा ले सकते हैं क्या ?

इस संबंध में आचार्य अमृतचंद्र कहते हैं कि माँ-बाप से पूछे बिना तो दीक्षा नहीं ले सकते; क्योंकि यदि बिना पूछे और बिना सूचना दिए ही दीक्षा ले ली गई तो माता-पिता अपने पुत्र को यहाँ-वहाँ खोजेंगे और पुत्र के नहीं मिलने पर पुलिसथाने में रिपोर्ट भी लिखाएंगे। तात्पर्य यह है कि माँ-बाप से बिना पूछे दीक्षा लेने पर कानूनी परेशानी उत्पन्न हो सकती है। इसलिए दीक्षा के लिए माँ-बाप से पूछना जरूरी है। अरे भाई ! मात्र पूछना ही जरूरी नहीं है; अपितु माता-पिता पुत्र की दीक्षा के समय आचार्यश्री के सामने उपस्थित होकर अनुमति देते हैं।

यद्यपि मुनिराज लोक की मर्यादा के बाहर होते हैं; लेकिन लोक की मर्यादाएँ उनके जीवन में बाधाएँ उत्पन्न नहीं कर दें; इसलिए सावधानी रखना जरूरी होता है। यदि असली माँ-बाप नहीं होते हैं तो दीक्षा के समय किसी को माँ-बाप तक बनाया जाता है और उनकी उपस्थिति में दीक्षा होती है।

फिर भी मूल प्रश्न तो खड़ा ही है कि यदि माँ-बाप अनुमति न दे तो क्या होगा ? अरे भाई ! माँ-बाप से आज्ञा लेना सूचना मात्र होती है; क्योंकि 'आज्ञा' शब्द 'आ' अर्थात् 'मर्यादा पूर्वक' और 'ज्ञा' माने 'ज्ञान करा देना'। 'आज्ञा' का तात्पर्य ही यही है कि सभ्य शब्दों में यह ज्ञान करा देना कि मैं दीक्षा लेने के लिए जा रहा हूँ।

लोक व्यवहार में भी 'आज्ञा' का यही अर्थ होता है। किसी ऑफिस में यदि १0 आदमी काम करते हों, तो छोटा कर्मचारी तो बड़े साहब से आज्ञा लेकर जाता ही है; पर साहब भी अपने आधीनों से कहते हैं कि मैं दो दिन के लिए छुट्टी पर जा रहा हूँ। तात्पर्य यह है कि यदि उच्चस्तर का कर्मचारी भी छुट्टी पर जाता है तो वह भी सूचना देकर जाता है। अन्तर मात्र इतना है कि दोनों की भाषा में पद के अनुरूप अन्तर हो जाता है।

'आज्ञा लेना' का तात्पर्य प्रकारान्तर से सूचना देना ही है। परिवार से आज्ञा लेने की एक भाषा है और उस भाषा को आचार्यदेव ने यहाँ पर प्रस्तुत किया है। वह भाषा इसप्रकार है कि दीक्षार्थी पुत्र माँ-बाप से कहता

(शेष पृष्ठ 5 पर ....)

रजिस्ट्रेशन आर. एन. आई. 31109/77

श्री कुन्दकुन्द कहान दि. जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट, मुम्बई द्वारा
ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन, जयपुर में

29 वाँ आध्यात्मिक शिक्षण शिविर

(रविवार, 23 जुलाई से मंगलवार, 1 अगस्त, 06 तक)

अत्यन्त हर्ष के साथ सूचित कर रहे हैं कि श्री कुन्दकुन्द कहान दि. जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट, मुम्बई द्वारा ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर में रविवार, 23 जुलाई से मंगलवार, 1 अगस्त, 2006 तक 29 वाँ बृहद् आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर का आयोजन अनेक विशिष्ट मांगलिक कार्यक्रमों सहित किया जा रहा है।

शिविर में अध्यात्मजगत के प्रसिद्ध प्रवक्ता बाबू जुगलकिशोरजी 'युगल', तार्किक विद्वान डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, डॉ. उत्तमचन्दजी जैन सिवनी, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, ब्र. यशपालजी जैन, पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी उज्जैन, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील जयपुर, पण्डित अनिलजी शास्त्री भिण्ड, पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर आदि अनेक विद्वानों का प्रवचन एवं कक्षाओं के माध्यम से लाभ मिलेगा।

इस अवसर पर टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक जो पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त कर चुके हैं, उनमें से डॉ. सुदीपजी जैन दिल्ली, डॉ.श्रीयांसजी जैन जयपुर, डॉ. राकेशजी जैन अलीगढ़, डॉ. योगेशजी जैन अलीगंज, डॉ. नरेन्द्रजी जैन जयपुर, डॉ. वीरसागरजी जैन दिल्ली, डॉ. मुकेशजी जैन विदिशा, डॉ. महावीरप्रसादजी जैन उदयपुर के उनके द्वारा किये गये शोध विषय पर व्याख्यान का लाभ मिलेगा।

शिविर में सिद्धपरमेष्ठी विधान का आयोजन भी किया जायेगा।

शिविर के सम्पूर्ण कार्यक्रम बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा इन्दौर एवं पण्डित अमृतभाई मेहता फतेपुर के निर्देशन में सम्पन्न होंगे।

इस मांगलिक प्रसंग पर आप सभी को धर्मलाभ लेने हेतु हमारा वात्सल्यपूर्ण हार्दिक आमंत्रण है। **ह्न समस्त ट्रस्टीगण**

श्री कुन्दकुन्द कहान दि. जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट, मुम्बई

हार्दिक बधाई

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यू.जी.सी.), नई दिल्ली द्वारा लेक्चररशिप के लिये आयोजित राष्ट्रीय पात्रता परीक्षा (नेट) में श्री टोडरमल दिग. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक **मनीष शास्त्री रहली** का चयन हो गया है।

जैन पथप्रदर्शक एवं महाविद्यालय परिवार आपके उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हैं। **ह्न प्रबन्ध सम्पादक**

छात्रवृत्तियाँ वर्ष : 2006

भारत में मान्यता प्राप्त स्कूलों/कॉलेजों/ प्रशिक्षण संस्थानों में अध्ययनरत छात्रों के लिये योग्यता तथा कमजोर आर्थिक स्थिति के आधार पर छात्रों को जैन सोशल वैलफेयर एसोसिएशन द्वारा दो श्रेणियों में छात्रवृत्तियाँ प्रतिवर्ष उपलब्ध कराई जाती है।

(क) नॉन रिफन्डेबल (वापिस न देनेवाली) छात्रवृत्ति : नान-तकनीकी, माध्यमिक, उच्च माध्यमिक, स्नातक व स्नातकोत्तर आदि शिक्षा के लिये 50/- रुपये से 250/- रुपये तक मासिक छात्रवृत्ति दी जाती है।

(ख) रिफन्डेबल (वापिस चुकाई जानेवाली) ब्याजमुक्त ऋण के रूप में छात्रवृत्ति : तकनीकी इंजिनीयरिंग, कम्प्यूटर, मेडिकल, बिजनिस मैनेजमेंट व जैनदर्शन में अनुसंधान आदि पाठ्यक्रमों में उच्च शिक्षा के लिये प्रतिभाशाली छात्रों को 500/- से 1000/- रुपये तक छात्रवृत्ति दी जाती है।

निर्धारित आवेदन-पत्र एक लिफाफे पर स्वयं का पता लिखकर और पाँच रुपये का डाक टिकिट लगाकर भेजने से प्राप्त हो सकता है। सम्पूर्ण विवरण सहित आवेदन पत्र कार्यालय में पहुँचने की अंतिम तिथि 31 अगस्त 2006 है।

ह्न मंत्री (छात्रवृत्ति), जैन सोशल वैलफेयर एसोसिएशन,
ई-9, ग्रीनपार्क एक्सटैन्शन, नई दिल्ली-110016

अवश्य लाभ लें

रात्रि 10.20 पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रवचनों को देखना न भूलें। प्रवचन प्रसारण में कोई समस्या हो तो श्री पीयूषकुमारजी शास्त्री से 09414717829 पर सम्पर्क करें।

विधान सम्पन्न

चिंचवड़ (पुणे-महा.) : यहाँ श्री अरिहंत दिगम्बर जैन ट्रस्ट के तत्त्वावधान में नेमिनाथ भगवान के मोक्ष कल्याणक के अवसर पर दिनांक 2 जुलाई 2006 को नेमिनाथ पंचकल्याणक विधान का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर विधि-विधान के समस्त कार्य पण्डित जितेन्द्रकुमारजी राठी जयपुर ने सम्पन्न कराये। आपके दो प्रवचनों का लाभ भी श्रोताओं को प्राप्त हुआ। साथ ही पण्डित अनन्तजी विश्वम्भर का भी सहयोग मिला।

जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) जुलाई (द्वितीय) 2006
RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा,** डबल एम.ए. जैनविद्या व धर्मदर्शन तथा इतिहास, नेट एवं **पण्डित जितेन्द्र वि.राठी,** साहित्याचार्य
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो कृपया निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
तार : त्रिमूर्ति, जयपुर **फैक्स :** 2704127